E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi

अनसूया एवं प्रियंवदा का चरित्र-चित्रण

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

अनसूया और प्रियंवदा दोनों शकुन्तला की प्रिय सखियाँ हैं और एक प्रकार से दोनों शकुन्तला के व्यक्तित्व की प्रतिच्छाया सी प्रतीत होती हैं। उन दोनों को पृथक् कर शकुन्तला के प्रारम्भिक स्वरूप का आकलन कठिन है। सखीद्वय की अवस्था एवं सौन्दर्य लगभग शकुन्तला के समान ही है। उन्हें देखते ही राजा दुष्यन्त के मुख से सहसा यह प्रशस्ति-वाक्य निकल ही पड़ता है- **"अहो मधुरमासां दर्शनम्"**। यदि शकुन्तला दुष्यन्त की दृष्टि में आश्रमाकाश की चन्द्रलेखा है तो सखीद्वय तदनुगामी विशाखा नक्षत्र- **"किमत्र चित्रं यदि विशाखे शशाङ्करेखामनुवर्तेते"**। तीनों सखियों का परस्पर सौहार्द-भाव समान वय और रूप के कारण अत्यन्त रमणीय हो गया है- **"अहो समवयोरूपरमणीयं भवतीनां सौहार्दम्"**।

प्रथम अङ्क से लेकर चतुर्थ अङ्क के विदाई-प्रसङ्ग तक शकुन्तला के साथ दोनों की अविनाभाव उपस्थिति नाटकीय कथावस्तु के विकास में सहायक होती है। साथ ही शकुन्तला के चरित्रगत वैशिष्ट्य को भी उद्भासित करती है। वस्तुतः ये दोनों पात्र महाकवि कालिदास की नाट्य प्रतिभा की देन है। दोनों के चरित्र में साम्य और वैषम्य दोनों है जिनका उल्लेख निम्नाङ्कित है-

समतायें-

१. जैसा कि ऊपर कहा गया है दोनों शकुन्तला की समवयस्का हैं और सौन्दर्य में लगभग उसके समान ही हैं।

२. दोनों 'पापान्निवारयति योजयते हिताय' मित्र के इस लक्षण के अनुसार सुख-दुःख दोनों में सदा उसके (शकुन्तला के) साथ रहती हैं और हृदय से शकुन्तला का अहर्निश हितचिन्तन करती हैं तथा तत्सम्बन्धी गोपनीय बातों का गोपन करती हैं। जब उन्हें दुष्यन्त के प्रति शकुन्तला की प्रेमासक्ति का

ज्ञान हो जाता है तब वे प्राण-प्रण से दोनों के मिलन हेतु सचेष्ट होती हैं। दुर्वासा के भीषण शाप को सुनकर दोनों का हृदय विदीर्ण हो जाता है।

३. दोनों का नाम अन्वर्थक है। अनसूया (न असूया अनसूया) यदि आत्मीय-जनों के प्रति ईर्ष्याद्वेषादि से रहित है, तो वहीं प्रियंवदा (प्रियं वदति) सदा प्रिय बोलने वाली।

४. दोनों में शिष्टता, विनम्रता तथा मधुरभाषित्व है। सम्पर्क में आने पर कोई भी व्यक्ति उनके व्यवहार से अप्रभावित नहीं रह सकता। उनके प्रभाव से प्रभावित होकर राजा स्वयं कहता है- **"भवतीनां सूनृतयैव कृतमातिथ्यम्"**। दोनों ही शाप-निवृत्ति के लिये यत्नशील होती हैं। दोनों के लिए शकुन्तला का संयोग जितना मधुर है उतना ही वियोग दुःखदायी।

५. सामान्यतः दोनों को कामशास्त्र का ज्ञान है। शकुन्तला जब काम-ज्वर से ग्रस्त होती है तब कमल-नाल, कमल-पत्र ओर चन्दनादि के लेप से उसके उपचार में तल्लीन होती हैं।दोनों को लोकव्यवहार, चित्रकला, मनोदशा आदि की जानकारी है।

विषमतायें-

१. अनसूया स्वभाव से वाग्विदग्ध, व्यवहार कुशल एवं प्रौढ़ है। साधारणतः हास्यकर बातों में उसकी अभिरुचि नहीं हैं। उसके व्यवहार में एक प्रकार की प्रौढता दृष्टिगोचर होती है। राजा जब तपोवन में उससे मिलता है तो उसके साथ बातचीत करने में वह स्वल्प भी सङ्कोच नहीं करती। एक प्रकार से परस्पर वार्तालाप का श्रीगणेश वही करती है- **"आर्य, न खलु किमप्यत्याहितम्। इयं नौ प्रियसखी मधुकरेणाभिभूयमाना कातरीभूता"**। अतीव शिष्ट ढंग से राजा का परिचय पूछती है- **"कतम आर्येण राजर्षिवंशोऽलङ्क्रियते? ... पदमुपनीतः"**। शकुन्तला के जन्म और लालन-पालन के वृत्तान्त की कथा राजा को अनसूया ही सुनाती है उसका वाक्चातुर्य स्पष्ट है।

इसके विपरीत प्रियंवदा में अत्यधिक विनोदप्रियता एवं चपलता है। अपने विनोदप्रिय आलाप से वह पूरे वातावरण को सजीव एवं मनोरम बनाये रहती है। शकुन्तला जब अनसूया से प्रियंवदा द्वारा वल्कल को अधिक कसने का उलाहना देती है तो वह परिहासमय ढंग से उत्तर देती है – "इसमें मेरा अपराध नहीं है। अतः मुझे उलाहना न देकर पयोधर-विस्तारी अपने यौवन को उलाहना दो- **"अत्र**

पयोधरविस्तारयितृ आत्मनो यौवनमुपालभस्व"। इसी प्रकार जब शकुन्तला वनज्योत्स्ना तथा आम्रवृक्ष की ओर स्नेहमयी दृष्टि से देखती है तो प्रियंवदा अपने स्वभावानुरूप उसका मजाक उड़ाती हुई कहती है- **"यथा वनज्योत्स्नाऽनुरूपेण पादपेन सङ्गता, अपि नामैवमहमप्यात्मनोऽनुरूपं वरं लभेयेति"**? शकुन्तला जब केसर वृक्ष को सींचने हेतु उसके समीप में पहुँचती है तो प्रियंवदा थोड़ी देर वहीं रुकने का आग्रह करती है- **"हला! शकुन्तले.....प्रतिभाति"**। उसके इस प्रकार के आग्रह को सुनकर तथा उसके अभिप्राय को समझकर शकुन्तला अत्यन्त प्रसन्न हो जाती है और सहसा कह बैठती है- **"अतः खलु प्रियंवदाऽसि त्वम्"**।

२. अनसूया में प्रियंवदा की अपेक्षा धैर्य तथा गाम्भीर्य अधिक है। दुर्वासा के शाप को सुनकर जब प्रियंवदा सहसा व्यग्र हो जाती है- **"हा धिक्, हा धिक्। अप्रियमेव संवृत्तम्"**। तब अनसूया धैर्यपूर्वक उसे दुर्वासा का अनुनय करने को कहती है- **"कोऽन्यो हुतवहाद् दग्धुं प्रभवति उपकल्पयामि"**। प्रियंवदा कहीं चपलतावश इस दारुण शाप वृत्तान्त को शकुन्तला से न बता दे वह प्रियंवदा को तदर्थ मना करती है- "प्रियंवदे द्वयोरेव ..... प्रकृतिपेलवा प्रिय सखी"।

इसी प्रकार चतुर्थ अङ्क के आरम्भ में जब प्रियंवदा के मन में यह शंका उठती है कि पिता कण्व गान्धर्व विवाह के वृत्तान्त को सुनकर न जाने क्या सोचेंगे –"तात इदानीं.....प्रतिपतस्यत इति", तो अपने विवेक बुद्धि का परिचय देती हुई वह (अनसूया) उत्तर देती है- **"यथाऽहं पश्यामि तथा तस्यानुमतं भवेत् गुणवते कन्यका प्रतिपादनीयेत्ययं तावत् प्रथमः सङ्कल्पः"**।

३. अनसूया शंकालु और किसी भी विषय का सम्यक् ऊहापोह करती है। चतुर्थ अंक में वह इसलिए चिन्तित हो रही है कि राजा अपने नगर में पहुँचने के बाद शकुन्तला के साथ किये गये अपने विवाह का स्मरण करेगा या नहीं- **"अद्य स राजर्षि.....वृत्तान्तं स्मरति वा न वेति"**।

इसके विपरीत प्रियंवदा अपेक्षाकृत निःशंक और निश्चिन्त स्वभाव वाली है। वह किसी विषय के पूर्वापर के विचार में अपना समय नष्ट नहीं करना चाहती। उसे अनसूया की आशंका का कोई आधार नहीं दीखता। उसे पूरा विश्वास है कि **"यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति"** के अनुसार सुन्दर

आकृति वाला दुष्यन्त गुणरहित नहीं हो सकता। **"न तादृशा आकृतिविशेषा गुणविरोधिनो भवन्ति"**। वह अपने वचनों का अवश्य पालन करेगा।

४. अनसूया को वर्तमान की अपेक्षा भविष्य की चिन्ता अधिक रहती है और उसमें व्यावहारिक बुद्धि भी अधिक है। वह अपनी सखी शकुन्तला के सुखद भविष्य को देखना चाहती है। तृतीय अङ्क में वह राजा से यह वचन (आश्वासन) ले लेना चाहती है कि "वह अपनी अनेक रानियों के बीच उसकी उपेक्षा न करे"- "वयस्य, बहुवल्लभा राजानः श्रूयन्ते। यथा नौ प्रियसखी बन्धुजनशोचनीया न भवति तथा निर्वाहय" और राजा द्वारा उसकी प्रियसखी को गौरवपूर्ण स्थान देने का यह आश्वासन **"परिग्रहबहुत्वेऽपि द्वे प्रतिष्ठे.....चोर्वी सखी च युवयोरियम्"** मिल जाने पर आश्वस्त हो जाती है। शकुन्तला की विदाई के अवसर पर उसे सजाने के लिए वह पहले से ही आम्र की डाल पर लटकने वाले नारियल के डिब्बे में केसरमालिका को रख देती है- **"तेन ह्येतस्मिंश्चूतशाखावलम्बिते..... केसरमालिका"**।

इसके विपरीत प्रियंवदा **"वर्तमानेन कालेन वर्तयन्ति मनीषिणः"** के अनुसार वर्तमान को अधिक देखती है। प्रथम अङ्क में जब दुष्यन्त का आगमन होता है और वह शकुन्तला के जन्मादि के विषय में अपनी जिज्ञासा प्रकट करता है तब सारा वृत्तान्त तो अनसूया बतलाती है परन्तु **"गुरोः पुनरस्या अनुरूपवरप्रदाने संकल्पः"** कहकर प्रणय-प्रसंग को आगे ले चलने का संचालन प्रियंवदा ही करती है। तृतीय अङ्क में उसके द्वारा मदनलेख के क्रियाकलाप भी इसी की पुष्टि करते हैं।

५. अनसूया प्रियंवदा की अपेक्षा अपने पिता के अधिक निकट है, क्योंकि तात कण्व विदाई के अवसर पर उसे ही अनेक बार सम्बोधित करते हैं। चतुर्थ अङ्क में जब अनसूया और प्रियंवदा शकुन्तला के लिये रोने लगती हैं तब वह (कण्व) अनसूया को ही सम्बोधित कर समझाते हैं- **"अनसूये अलं रुदित्वा.....शकुन्तला"**। इसी प्रकार से आश्रम को अपने वियोग से विह्वल बनाकर शकुन्तला के चले जाने पर जब दोनों सखियाँ अपना दुःख प्रकट करती हैं तब वह (कण्व) अनसूया से ही अपनी कातरता व्यक्त करते हैं और उन्हें आश्रम लौटने को कहते हैं- **"(सनिःश्वासम्) अनसूये! गतवती वां सहचारिणी.....प्रस्थितम्"**। वह अपने पिता के स्वभाव तथा विचार को निकट से जानती है।

इसीलिये चतुर्थ अङ्क में प्रियंवदा के इस भय- "शकुन्तला के गान्धर्व विवाह का वे अनुमोदन करेंगे या नहीं" का वह तुरन्त निवारण कर देती है।

६. अनसूया अपेक्षाकृत प्रणय सम्बन्धी क्रियाकलाप से अनभिज्ञ है। प्रथम अङ्क में शकुन्तला जब एकाग्रचित्त होकर सहकार वृक्ष से सम्पृक्त वनज्योत्स्ना को देखती है और उनके परस्पर समागम की प्रशंसा करती है तो उसके हृदयगत रहस्य को प्रियंवदा समझती है- **"यथा वनज्योत्स्नाऽनुरूपेण पादपेन सङ्गता.....वरं लभेयेति"**। परन्तु जब वह अनसूया से शकुन्तला के एकटक सहकार वृक्ष एवं वनज्योत्स्ना को देखने का कारण पूछती है तो वह रहस्य जानने में अपनी असमर्थता व्यक्त करती है- **"न खलु विभावयामि"**। इससे अनसूया की कामविषयक अनभिज्ञता ही सूचित होती है।

इसके विपरीत प्रियंवदा प्रणय-व्यापार के स्वरूप को अच्छी प्रकार जानती है और एक प्रकार से शकुन्तला के प्रणय व्यापार में सूत्रधार का कार्य वही करती है। तृतीय अङ्क में जब शकुन्तला अत्यन्त अस्वस्थ हो जाती है तब सबसे पहले प्रियंवदा ही उसके सन्ताप के मूल कारण (दुष्यन्त के प्रति प्रेम) को जान जाती है और अनसूया से उसके बारे में बतलाती है- **"(जनान्तिकम्) अनसूये! तस्य राजर्षेः ..... अयमातङ्को भवेत्"।** यहीं नहीं विरह-व्यथित दुष्यन्त की शारीरिक कृशता के कारण को भी वह समझ जाती है- **"ननु स राजर्षिरस्या..... प्रजागरकृशो लक्ष्यते"**।

तृतीय अङ्क में अनसूया द्वारा शकुन्तला के सन्ताप को दूर करने के लिये उपाय के बारे में पूछने पर मदनलेख लिखने का प्रस्ताव प्रियंवदा ही रखती है– **"हला! मदनलेखोऽस्य क्रियताम्"**। और मदनलेख सम्बन्धी प्रस्ताव का क्रियान्वयन भी वही (प्रियंवदा) कराती है। मदनलेख को राजा के पास गुप्त रूप से कैसे पहुँचाया जाय? इस प्रश्न का समाधान भी वही (प्रियंवदा) करती है "वह स्वयं फूलों में छिपा कर प्रेमपत्र को देवता के प्रसाद के बहाने राजा के पास पहुँचा देगी"- **"तं सुमनोगोपित कृत्वा देवप्रसादस्यापदेशेन तस्य हस्ते प्रपायिष्यामि"**। एक तापस-कन्या (प्रियंवदा) की प्रेमपत्रलेखन पटुता तथा उसको प्रेमी तक पहुँचाने के लिये अपनायी जाने वाली उक्त प्रक्रिया दोनों आश्चर्यकर हैं। प्रथम अङ्क में तापस कन्याओं की नैसर्गिक माधुरी पर मुग्ध होने वाले दुष्यन्त को यदि

कहीं प्रियंवदा की काम सम्बन्धी इस कमनीय कला का भी पता चल गया होता तो निःसन्देह वह "मधुरमासां दर्शनम्" कह कर न रुक जाता अपितु न जाने क्या-क्या सोचता और कहता?